ISSN: 2348-3083
SJIF 2016 : 4.44
UGC APPROVED SR. NO. 48612
An International Peer Reviewed & Referred
SCHOLARLY RESEARCH JOURNAL FOR HUMANITY SCIENCE & ENGLISH LANGUAGE

बाल अधिकारों के लिए शिक्षा

जयंत पाल सिंह, Ph. D. & शिरीष पाल सिंह, Ph. D.

[1]टी.जी.टी सर्वोदय बाल विद्यालय, सी ब्लॉक दिलसाद गार्डन दिल्ली .95

[2](पत्राचार लेखक) सह प्रोफेसर, महात्मा गाँधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय (केन्द्रीय विश्वविद्यालय), वर्धा - 442001, महाराष्ट्र

Scholarly Research Journal's is licensed Based on a work at www.srjis.com

महान दार्शनिक सुकरात ने कहा था कि अगर वह ग्रीक के नगर एथेंस की सबसे ऊँची पहाड़ी की चोटी पर चढ़ सके तो वहां से केवल वह एक संदेश देना चाहेंगे। ''सभी नगर वासियों तुम लोग हर प्रकार के कंकड पत्थरों को जोड़कर सदा धन अर्जन में लगे रहते हो और उन बच्चों का कतई ध्यान नहीं रखते जिन्हें अन्ततः यह सब देकर जाना है।'' मानव जीवन का यही सार है, जो सुकरात लोगों को देना चाहते थे। हर पीढ़ी का उत्तरदायित्व आनेवाली पीढ़ी को यह सब कुछ उपलब्ध कराना है। जिससे शांतिमय, सुखमय, रोग, भय, हिंसा, व्यसन आदि से मुक्त जीवन जिया जा सके। इसके लिए आवश्यक अनुभव ज्ञान तथा कौशल प्राप्त करने के अवसर मिलने चाहिए। वर्तमान शिक्षा व्यवस्था अपने उद्देश्यों को किसी भी प्रकार व्यक्त करें, उनका मूलभूत उद्देश्य यही है कि बच्चों की देखभाल सुचारू रूप से हो तथा उनके व्यक्तित्व विकास के अवसरों की खोज, समाज तथा शासन व्यवस्था करे। (जगमोहन सिंह, दैनिक जागरण 27 मई 2009)

आज अगर ऋषि सुकरात भारत भूमि के नागरिक होते तो वे यह संदेश अपने ब्लाग के माध्यम से तथा टेलीविजन, रेडियो आदि प्रसार माध्यमों से प्रचारित करते कि ''हे, सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न लोकतंत्रात्मक भारतीय गणराज्य के लोगों, मैं सेटेलाईट के माध्यम से विनम्रतापूर्वक, विनयपूर्वक यह करबद्ध प्रार्थना करता हूँ कि तुम भारत भूमि के बालकों को सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक–न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता प्रतिष्ठा तथा अवसर की समानता तथा उन्हें व्यक्ति की गरिमा से वंचित क्यों कर रहे हो ? जबकि तुमने यह सभी अपने संविधान के माध्यम से अंगीकृत अधिनियमित और आत्मार्पित किया हुआ है। मुझे यह देखकर भयंकर वेदना हो रही है कि संविधान के लागू होने के 6 दशक बाद भी मेरे देश के बालक–शिक्षा तथा स्वास्थ्य सुविधाओं से वंचित है। तुम कन्या भ्रूणहत्या के दोषी हो जबकि तुम्हारे सद्साहित्य में भ्रूणहत्या को घृणित कार्य घोषित किया गया है। भ्रूण हत्यारों के दण्ड स्वरूप मिलने वाले रौरव नर्क का भी तुम्हें भय नहीं है। तुमने अपने संविधान

में बालकों के शिक्षा के अधिकारों को घोषित किया हुआ है। छोटे बच्चों को बाल्यकाल की देखरेख तथा शिक्षा को उपलब्ध कराने की व्यवस्था की हुई है। फिर भी तुम्हारे यहां बालमृत्युदर उच्च है। न तुम सभी बच्चों का टीकाकरण करा रहे हो न ही उन्हें पोषक तत्वों युक्त भोजन का प्रबन्ध कर रहे हों। मुझे कष्ट होता है कि महावीर तथा गांधी के देश के बच्चे घरों, विद्यालयों तथा समाज में हिंसा के शिकार हो रहें हैं। उन्हें अपमान, उपेक्षाजनक व्यवहार, उपेक्षा तथा दुर्व्यवहार का सामना करना पड़ता है। न तो बच्चों को सामाजिक बीमा उपलब्ध है न हीं सामाजिक सुरक्षा। तुम्हारा बच्चों को पढ़ाने का तरीका भी स्तरीय नहीं है। उन्हें खेलने की सुविधाएं भी उपलब्ध नहीं हैं। तुम नशीले पदार्थों के दुर्व्यापार में बच्चों का इस्तेमाल कर रहे हो। मेरे देशवासियों तुम सम्पन्न देश के निर्धन नागरिक जरूर हो परन्तु वर्तमान परिपेक्ष्य में बच्चों के विकास में निर्धनता इतनी प्रभावी नहीं है। जितनी कि तुम्हारी इच्छा शक्ति। तुम दृढसंकल्प करो कि बच्चों के विकास के लिए तुम अपने आप को समर्पित कर के भारत वर्ष के सुखद भविष्य का निर्माण करोगे।

आज एक बडे वर्ग के लिए शिक्षा का अर्थ मात्र यह रह गया है कि पब्लिक स्कूल में बच्चे को प्रवेश दिला दें। भौतिकवाद तथा उपभोक्तावाद के इस दौर में बाजार हावी होता जा रहा है। विद्यालय मात्र वणिक प्रतिष्ठान नहीं होने चाहिए जो कि वे बनते जा रहे हे। जो लोग अपनी हैसियत से अधिक मोटी फीस देकर बच्चों को प्रवेश दिला रहे हैं उनका यह अधिकार तो बनता ही कि स्कूल में बच्चों की अच्छी देखभाल हो। बच्चों को भविष्य के जीवन के लिए उचित दिशा निर्देश मिले।

शिक्षा व्यवस्था पब्लिक और सरकारी स्कूलों मे बंटी हुई है। पब्लिक स्कूलों की पहचान आलीशान भवन, बेहतर वातावरण और भारी भरकम फीस से होती है। जबकि सरकारी स्कूल की पहचान हर प्रकार की कमियों से होती हैं। समाज के कमजोर वर्ग के पास शिक्षा प्राप्त करने का एक मात्र साधन सरकारी विद्यालय ही हैं। सरकारी नीतियां, बडी–बडी योजनाएँ, शिक्षा के प्रावधानों की घोषणाएं अधिकांशतः कागजों में ही दबी रह जाती है। उन्हें लागू कर पाना सम्भव नहीं हो पाता। दिल्ली में कुल मिलाकर सरकारी विद्यालय इतने विपन्न नहीं हैं जितने की अन्य प्रान्तों के विद्यालय हैं। दो पारियों में विद्यालय चलने के बाद भी शतप्रतिशत बच्चों को प्रवेश नहीं मिल पाता। छात्र अध्यापक अनुपात उच्च है। पिछले कुछ वर्षों से सरकारी विद्यालयों के परीक्षाफल भी प्राईवेट विद्यालयों से कम नहीं हैं। और यदि विश्लेषणात्मक अध्ययन किया जाए तो यह तथाकथित पब्लिक स्कूलों से अच्छे ही है।

हम सभी बच्चों को प्यार करते हैं । हम सभी मानते हैं कि बच्चे परिवार, राष्ट्र और सम्पूर्ण विश्व का भविष्य हैं। बच्चों के संतुलित विकास पर ही मानवता का भविष्य आधारित है। सम्मानपूर्वक, प्रेमपूर्वक बच्चों का पालन पोषण करना उन्हें यथायोग्य शैक्षिक, सांस्कृतिक, नैतिक, धार्मिक, शारीरिक, आध्यात्मिक तथा संवेगात्मक विकास के अवसर उपलब्ध कराना समाज के दायित्व हैं । परन्तु आमतौर पर देखा जाता है कि बच्चों को नजर अन्दाज किया जाता है, उनकी आवश्यकताओं की परिपूर्ति नहीं की जाती उनके विचारों तथा भावनाओं की कद्र नहीं की जाती। चाहे वे माता पिता, अभिभावक अथवा अध्यापक हों अपने विचार अपनी भावनाएँ बच्चों पर थोपते हैं, उनके साथ दुर्व्यवहार करते हैं, उन्हें महत्व नहीं

देते, उन्हें सम्मान नहीं देते। उनके साथ किया जाने वाला व्यवहार, बच्चों के साथ किए जाने वाले व्यवहार से सर्वथा अलग होता है। बच्चे मनुष्य का लघुरूप नहीं होते वे तो बच्चे होते हैं उन के साथ बच्चों के साथ किए जाने वाला व्यवहार ही किया जाना चाहिए।

आम अध्यापक तथा परिवार के प्रौढ़जन यह मानते हैं कि कठोर अनुशासन से बच्चे का संतुलित विकास किया जा सकता है। हमें यह जान लेना चाहिए कि कठोर अनुशासन बच्चे का विकास नहीं बल्कि विनाश करता है।

बच्चे गतिमान, सजीव, वृद्धिमान, विकासमान, परिपक्वोन्मुख व्यक्तित्व हैं। बच्चा स्वयमेव पूर्ण व्यक्तित्व है। उस की अपनी आवश्यकताएं, आकांक्षाएं, पसंदगियां नापसंदगियां होती हैं। बच्चे को अचेतन, अर्द्धचेतन, आवश्यकताएं तथा इच्छाएं, उसका परिवेश तथा आनुवंशिकता प्रभावित करती हैं। बच्चे को समझना उसे जानना यद्यपि सरल कार्य नहीं है। परन्तु अध्यापकों को उसे समझना आवश्यक है। राष्ट्रीय तथा वैश्विक स्तर पर बच्चों के संतुलित तथा समग्र विकास के लिए, उन्हें कुछ अधिकार प्रदान किए गए हैं। उन अधिकारों को बच्चों को उपलब्ध कराना परिवार तथा समाज का दायित्व है। समाज ने बालकों के विकास का सम्पूर्ण दायित्व अध्यापकों को सौंपा हुआ है इस कारण बच्चों के विकास की सम्पूर्ण जिम्मेदारी अध्यापकों पर है। अध्यापक बच्चों के विकास के लिए एक तरह से सम्पूर्ण जिम्मेदार नहीं है तो महत्वपूर्ण जिम्मेदार अवश्य हैं।

बच्चों के समग्र विकास के लिए अवसर प्रदान करना अभी भी एक चुनौती बनी हुई है। परन्तु सामूहिक प्रयास तथा सभी क्षेत्रों की समेकित कार्यवाही से इसे यथार्थ में बदला जा सकता है। समेकित प्रयास में सरकार के विभिन्न विभागों, माता–पिताओं तथा अध्यापकों का महत्वपूर्ण योगदान रहना आवश्यक है।जब हम बच्चों की बात करते हैं तब भारत की जनसंख्या के 42 प्रतिशत भाग की बात करते है। क्योंकि भारत की कुल संख्या का 42 प्रतिशत भाग 18 वर्ष से कम आयु के बच्चों का है। अर्थात भारत के बजट में बालकों की हिस्सेदारी 42 प्रतिशत होनी ही चाहिए। परन्तु खर्च सम्बन्धी समंक कुछ अलग ही कहानी कह रहे है। वर्ष 2005 के बीच केन्द्र सरकार द्वारा व्यय किए गए 100 रुपयों में से औसतन 3 पैसे बच्चों की सुरक्षा पर, 40 पैसे बाल स्वास्थ्य पर प्राथमिक शिक्षा पर 1 रु. 50 पैसे खर्च किए गए। लेकिन इस बात को अब अधिकाधिक स्वीकृति मिल रही है कि नियोजन के केन्द्र में अब बच्चों के अधिकार पर आधारित विकास को प्रमुखता देनी होगी। (योजना, नव. 2008)

भारत, संयुक्त राष्ट्र बाल अधिकार घोषणा 1959 का एक पक्षकार है। इसके प्रावधानों के अनुसार भारत ने 1974 में राष्ट्रीय बालनीति अंगीकार कर ली थीं। इस नीति में बच्चों के जन्म से पूर्व और उपरांत तथा उसके पूर्ण शारीरिक, मानसिक और सामाजिक विकास होने तक की अवधि में समुचित सेवाओं के संवैधानिक प्रावधानों की पुष्टि की गई हैं । तदानुसार सरकार राष्ट्रीय और राज्य के कानूनों की समीक्षा के लिये कार्यवाही कर रही है ताकि उन्हें अभिसमय के प्रावधानों के अनुकूल बनाया जा सके। अभिसमय पर क्रियान्वयन की प्रगति का भलीभांति मूल्यांकन करने के लिये सरकार ने समाज के विभिन्न दावेदारों को साथ लेते हुए निगरानी की उपयुक्त कार्यविधि भी विकसित कर ली है।

भारत ने बच्चों की उत्तरजीविता, संरक्षण और विकास संबंधी विश्व घोषणा पर भी हस्ताक्षर किए हैं। शिखर सम्मेलन में दिए गए वचन के अनुसरण में मानव संसाधन विकास मंत्रालय के अंतर्गत महिला एवं बाल विकास विभाग ने राष्ट्रीय बाल कार्ययोजना भी तैयार की है। देश के 3 करोड बच्चों की आवश्यकताओं, अधिकारों और आकांक्षाओं को ध्यान में रखते हुए भारत की राष्ट्रीय कार्य योजना में अंतरराष्ट्रीय शिखर सम्मेलन में घोषित कार्ययोजना की अधिकांश सिफारिशों को समाहित कर लिया गया है। योजना में स्वास्थ्य, पौष्टिकआहार, शिक्षा, जल, स्वच्छता, और पर्यावरण क्षेत्रों को प्राथमिकता दी गई है। कठिन परिस्थितियों में रहने वाले बच्चों के बारे में योजना में विशेष ध्यान दिया गया है। इसका उद्देश्य भारतीय संदर्भ में अभिसमय के लक्ष्यों को हासिल करने के लिये ढांचा (व्यवस्था) तैयार करना है। ख़तरे में बचपन 'शीर्षक से विश्व के बच्चों की स्थिति के बारे में यूनिसेफ की रिपोर्ट, 2005, में भारत के बच्चों की स्थिति का उल्लेख करते हुए बताया गया है कि भारत के लाखों बच्चे स्वास्थ्य, पौष्टिकआहार, शिक्षा, पीने का साफ तथा सुरक्षित पानी और उत्तरजीविता के अधिकारों से समान रूप से वंचित है। बताया गया है कि उनमें से 63 प्रतिशत भूखे ही सो जाते हैं और 53 प्रतिशत कुपोषण से बुरी तरह प्रभावित हैं। रिपोर्ट में कहा गया है कि 14 करोड़ 70 लाख बच्चे कच्चे घरों में रहते हैं, 7 करोड़ 70 लाख बच्चे नल के स्वच्छ पानी से वंचित हैं, 8 करोड़ 50 लाख बच्चों का टीकाकरण नहीं होता। 2 करोड़ 70 लाख बच्चों का वजन गंभीर रूप से कम है और 3 करोड़ 30 लाख कभी विद्यालय नहीं गए। इनका आकलन है कि भारत में 5 से 14 वर्ष के 7 करोड़ 20 लाख बच्चों को बुनियादी शिक्षा की सुविधा प्राप्त नहीं है। लड़कियां इसमें सबसे ज्यादा प्रभावित होती हैं क्योंकि लड़के को वरीयता दिए जाने के कारण उनके साथ भेदभाव किया जाता है और उनकी उपेक्षा की जाती है।

हम भारत के शिक्षक, बच्चों के विकास के प्रति वचनबद्ध हैं। शिक्षकों में– आशा तथा आँगनवाडी–कर्मचारी, पूर्वप्राथमिक विद्यालय, प्राथमिकविद्यालय, माध्यमिकविद्यालय, उच्चमाध्यमिक विद्यालय, स्नातक महाविद्यालयों के अध्यापक एवं समस्त कर्मचारी सम्मिलित हैं। हमारा दायित्व है कि बच्चे शारीरिक, बौद्धिक, सामाजिक, संवेगात्मक, शैक्षिक, अध्यात्मिक, नैतिक, अर्थात समग्र रूप से विकसित हों, उनमें राष्ट्रीयता का भाव विकसित हो तथा वे अन्तरराष्ट्रीय सद्भाव से युक्त हो कर समस्त विश्व के लिए उपयोगी व्यक्ति के रूप में विकसित हो तथा मानव– कल्याण के कार्यों में अपना योगदान प्रदान करें।यह समय प्रचार का काल है। बालकों को प्रचार तथा सत्य में अन्तर सिखाना विद्यालय का दायित्व है। बर्टेण्ड रसेल ने बताया है कि साक्षरता, प्रचार शक्ति को बढ़ा देती है। सामान्य व्यक्ति प्रचार से शीघ्र प्रभावित हो जाता है। जब प्रचार भावनाओं और आवेगों के आधार पर किया जाता है तो वह और अधिक प्रभावी हो जाता है। रसेल के शब्दों में ''बच्चों को पर्याप्त तथ्यों के आधार पर ही निष्कर्षों तक पहुँचाने की क्षमता पैदा की जाए ताकि वह सत्य तथा प्रचार में अन्तर कर सके''।

आजकल के बच्चे प्रतियोगिताओं से बुरी तरह प्रताड़ित हैं। प्रतियोगिताएं व्यक्ति का सुख चैन छीनकर उनमें भय तथा आत्महीनता भर देती है। यह द्वेष पैदा करती है। रसेल कहते हैं कि– ''विश्वशांति के

लिए बच्चों में द्वेष की भावना का विकास नहीं होने देना चाहिए, यदि बचपन में बच्चों को दण्ड तथा शक्ति के प्रयोग के अत्याचार से बचा लिया जाए तो आगे जाकर वे शान्तिवादी बन जाते है।''

''यदि युद्ध पुरुष और महिलाओं के मस्तिष्क से प्रारम्भ होता है तो महिला और पुरुष के मस्तिष्क में शान्ति का निर्माण भी होना चाहिए।'' यह कथन यूनेस्को द्वारा लगातार प्रसारित तथा प्रचारित किया जाता रहा है। ''स्थाई शान्ति की स्थापना का कार्य शिक्षा करती है।'' (मारिया मोन्टेसरी) ''हिंसा से हिंसा उन्पन्न होती है। विचार शक्ति से विचार शक्ति उत्पन्न होती है।'' (मार्टिन लूथर किंग जूनियर)। भारतीय साहित्य में अहिंसा को महत्व दिया गया है। हटयोग प्रदीपिका में जिन पांच यमों का वर्णन है। उनमें अहिंसा का पहला स्थान है। मनुस्मृति (5–27–14), हेमचन्द्र योगशास्त्र, वशिष्ठ धर्मसूत्र (44) कौटिल्य अर्थशास्त्र (1–3–13) गीता (अध्याय–2) आदि ग्रंथों में अहिंसा के संदर्भ में विश्लेषण आया है। मनुस्मृति में व्यक्तियों तथा अन्य जीवजन्तुओं के साथ ही नहीं बल्कि पौधों के साथ भी अहिंसा वृत का पालन करने का निर्देश दिया गया है। एक बार किसी जिज्ञासु ने भगवान महावीर से पूछा कि भगवान संसार में सबसे प्राचीन धर्म कौन सा है? तो भगवान ने समाधान की भाषा में कहा '' सब्बे पाणा ण हंतव्वा, एस धर्म्मे धुवे णिइए सासए–अर्थात संसार का कोई भी प्राणी हन्तव्य नहीं है, यह अहिंसा धर्म ही ध्रुव, नित्य और शाश्वत है।'' शक्ति तथा सेना का विकास शत्रुभाव, निरंकुशता, गोपनीय तथा प्रचार (प्रोपेगण्ड़ा) प्रकृति का शोषण, हथियारों की होड़ तथा व्यक्तियों का शोषण ये सभी हिंसक कार्य है। ''यदि हम विश्व में असली शान्ति चाहते है तो हमें युद्ध के विरुद्ध युद्ध की घोषणा चाहते हैं। तो इसे हमें बच्चों को साथ लेकर प्रारम्भ करना होगा'' (महात्मा गाँधी)। यदि हम संसार से हिंसा के ताण्डव से बचाना है तो बच्चों के साथ होने वाली हिंसा को रोकना होगा तथा बच्चों को अहिंसा का पाठ पढ़ाना होगा। भारत में घुमन्तु जातियों की संख्या काफी है। सरकार का दावा है कि हम उन्हें जनगणना के दौरान गिन लेते हैं। क्या इन्हें गिन लेने मात्र से ही सरकार के दायित्व की पूर्ति हो जाती है? उनके पास न आवास है न ही उनके बच्चों के लिए विद्यालय। एक स्थान पर न बसने के कारण इनके लिए घुमन्तु विद्यालय बना पाना सम्भव नहीं है। इनके बच्चों के लिए विशेष प्रकार के आवासीय विद्यालयों की स्थापना अवश्य होनी चाहिए, जिसकी सम्पूर्ण खर्च समाज उठाये।

अपंग समाज के आवश्यक अंग है। इन्हें विशेष प्रकार की सहायता की आवश्यकता है। दृष्टिहीन, दृष्टिबाधित, मूकबधिर बच्चों के साथ–साथ मानसिक रूप से बाधित बच्चों के विकास के लिए विशेष प्रशिक्षण प्राप्त अध्यापकों तथा शिक्षण सहायक सामग्रियों की आवश्यकता होती है। शारीरिक रूप से बाधित बच्चों को समाज से दया नहीं बल्की अपने अधिकारों की आवश्यकता है।

अल्पसंख्यक समुदाय के व्यक्तियों को अपनी भाषा, संस्कृति, रीतिरिवाज आदि के सम्बन्ध में कई बार समस्याएं आती हैं। इन अल्पसंख्यकों को अपनी भाषा, संस्कृति आदि के संरक्षण के अधिकार हैं। जो की हमारे संविधान में दिये हुए हैं। लेकिन अभी तक उन्हें वे सब प्राप्त करने में समस्याएं आ रही हैं।

भारत के दो तिहाई व्यक्ति ग्रामीण क्षेत्रों में बस रहे हैं। उन्हें रोजगार, बिजली, पानी, सूचना, शिक्षा, परिवहन, सुरक्षा आदि की सुविधाएं कम मात्रा में उपलब्ध हैं। विद्यालयों का स्तर निम्न ही नहीं बल्कि

निम्नतर है। जिस बालक का परिवार गाँव में रहता है, उसे शिक्षा सुविधाएं किस स्तर की मिल पाती हैं। इस की जानकारी सब को है। गाँवों के विद्यालयों की स्थिति दयनीय है। सर्वेक्षणों में स्पष्ट होता है कि हमारे गाँवों में ऐसे भी विद्यालय हैं जहाँ पर अध्यापक नहीं हैं। ऐसे विद्यालय है जहाँ पर भवन नहीं हैं और ऐसे भी विद्यालय हैं जहाँ पर भवन तथा अध्यापक दोनों ही नहीं है। आश्चर्य की बात है विद्यालयों में शिक्षण सामग्री का अभाव नहीं बल्कि अकाल है। वनवासी, पर्वतवासी, मरुस्थलवासी भी मेरी आपकी तरह भारत के सम्मानित नागरिक हैं। उन्हें तथा उनके बच्चों को शिक्षा की कितनी सुविधाएं मिल रहीं हैं यह राजधानियों में रहने वाले क्या अनुमान लगाएंगे। क्या इन परिस्थितियों में बच्चों को अच्छी शिक्षा दिला पाना सम्भव है।

आज भी कन्याओं का बेचान (दुर्व्यापार) हो रहा है। विदेश में नौकरी के नाम पर युवा लड़कियाँ अरब देश के नवधनाढ्यों को बेची जा रहीं हैं। अबोध बालिकाओं को धन लेकर बेचे जाने की खबरें भी समाचार पत्रों में प्रकाशित होती ही रहती हैं। कई प्रान्तों की लड़कियों को शादी के नाम पर खरीदा जा रहा है। इस प्रकार की एक घटना भी समाज को कलुषित तथा कलंकित करने के लिए काफी है। यहाँ तो यह प्रक्रिया निरन्तर प्रगति कर रही है।

भारत में कुपोषण एक बड़ी समस्या है। यद्यपि गाँवों में आँगनवाडियों के माध्यम से माताओं बच्चों, नवजातों तथा शिशुओं की स्वास्थ्य रक्षा के पर्याप्त प्रबन्ध किए जा रहे हैं। फिर भी हमारे देश में नवजात, शिशु तथा बाल मृत्युदर अति उच्च है।कुपोषण का मानसिक विकास पर बुरा प्रभाव पड़ता है। यदि कुपोषण समाप्त नहीं किया गया तो बौद्धिक क्षमता कम होने के कारण होने वाली क्षतियों तथा दुष्प्रभावों को झेलना पड़ेगा जो कि एक बहुत बड़ी राष्ट्रीय क्षति होगी।

किसी भी देश के लिए उसके बच्चे सबसे मूल्यवान सम्पत्ति होते हैं। कमेनियन्स के शब्दों में राज्य के लिए लौह प्राचीर, कांस्य द्वार, रजत तथा स्वर्ण के ढ़ेरों तथा राजमहलों की अपेक्षा बुद्धिमान मनुष्य कहीं अधिक मूल्यवान सम्पत्ति हैं। वे आगे कहते है कि यदि हम किसी व्यक्ति को सद्गुणों (Virtues) से शिक्षित करना चाहते हैं तो उसे कोमल आयु में ही सँवारना चाहिए। वे अध्यापकों को सुझाव देते है ''अध्यापकों को चाहिए कि वे रुखेपन से शिष्यों को अपने से विलग न करें वरन् पितृवत स्थाईभावों तथा शब्दों से उन्हें आकृष्ट करें।'' वे दण्ड का प्रतिषेध करते हैं तथा कहते है कि ''सीखने की तत्परता के अभाव में बालक को दण्ड न दिया जाए। यदि बालक सीखने के लिए तत्पर न हो तो भी उसे दण्ड न दिए जाए, क्योंकि किसी अन्य की गलती नहीं वरन् अध्यापक की भूल है, जो या तो यह नहीं जानता है कि बालक को ज्ञान ग्रहण करने के लिए किस प्रकार तैयार किया जाए या ऐसा करने के लिए प्रयास करने का कष्ट नहीं उठाता, क्योंकि एक संगीतज्ञ अपने सितार को घूँसे, डण्डे से नहीं मारता और न ही उसे दीवार से मारकर तोडता है, क्योंकि वह भद्दी ध्वनी निकालता है। इसके विपरीत वह वैज्ञानिक सिद्धान्तों के अनुसार उस को लययुक्त बनाकर व्यवस्थित करता है।

दुनिया के तीन कुपोषित बच्चों में से एक बच्चा भारतीय है और विश्व के आधे कुपोषित बच्चे भारत, बांग्लादेश तथा पाकिस्तान में है। भारत में नवजात शिशुओं में से 30 प्रतिशत बच्चे कम लम्बाई के होते हैं। 6 वर्ष की आयु से कम के 66 प्रतिशत बच्चे अल्पपोषित हैं। भारत में से 14 वर्ष की आयु के बालश्रमिकों की संख्या एक करोड़ छब्बीस लाख थीं (जनगणना 2001) इसी आयु वर्ग के 1 करोड 34 लाख बच्चे विद्यालय नहीं जाते हैं तथा 30 लाख बच्चे 15 वर्ष की आयु से पहले एक बच्चे को जन्म देती हैं । (जनगणना 2001)। ये सभी समंक राष्ट्रीय बालअधिकार आयोग के इन फोकस के वोल्यूम–1 संख्या 1 से लिये गये हैं। ये समस्त आँकड़े आपको अविश्वसनीय लग सकते हैं। परन्तु अविश्वसनीय हैं नहीं। युनीसेफ के प्रकाशन स्टेट ऑफ वर्ल्ड चिल्ड्रन 2003 के अनुसार भारत 5 वर्ष से कम आयु के 47 प्रतिशत बालक मध्यम तथा गम्भीर अल्पभार से पीडित हैं तथा जिनमें से गम्भीर अल्पभार से पीडित की प्रतिशत 18 हैं। डी.टी.पी. (डेप्थीरिया, कुकरखांसी तथा टिटनस) से भारत में केवल 64 प्रतिशत एक वर्ष तक की आयु के बच्चे ही प्रतिरक्षित हो पाते हैं। जबकि क्यूबा, वियतनाम, ब्राजील, रुस तथा यू.एस.ए. में यह प्रतिशत क्रमश 99, 98, 97, 96 तथा 94 रही है। (एम्युनाइजेशन 2001 स्रोत–यूनीसेफ 2001)

बच्चे राष्ट्र का भविष्य हैं। यह कथन भावुकता में कहा गया कथन नहीं है और न ही यह कथन किसी देश, काल, परिस्थिति से प्रभावित है। यह केवल ऋृजु सत्य है। बच्चों के विकास पर ही राष्ट्र का भविष्य निर्भर है। प्रेम तथा सम्मानपूर्वक बच्चों का पालन पोषण करना, यथायोग्य शैक्षिक, सांस्कृतिक, नैतिक, धार्मिक, शारीरिक, संवेगात्मक, तथा आध्यात्मिक विकास करना, प्रत्येक अभिभावक एवं अध्यापक का दायित्व है। अध्यापकों का दायित्व अभिभावकों के दायित्व से अधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि अधिकांश अभिभावकों को यह पता ही नहीं होता कि उन्हें बच्चों के पालन पोषण तथा विकास के लिये क्या करना चाहिये तथा क्या नहीं करना चाहिये । नन्हें नागरिकों के विकास में अध्यापकों के महत्व को नकारा नहीं जा सकता। अध्यापक बालविकास के चक्र की धुरी होते हैं। राष्ट्र ने अपने नागरिकों के सर्वांगीण विकास के लिये अध्यापकों को सौपा हुआ है। अतः अध्यापकों का दायित्व यह है कि वे जाति, सम्प्रदाय, पंथ, आर्थिक, शारीरिक, बौद्धिक, रंग आदि विभेदों से अप्रभावित रह कर, अपने शिष्यों का विकास, मनोयोगपूर्वक एवं अपनी समस्त शक्तियों का उपयोग करते हुए करें।

उपर्युक्त सदंर्भो एवं आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये अध्यापकों में भी कुछ विशेषताएं होनी आवश्यक है। इनकी पूर्ति उन्हें अपने शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों तथा सेवाकालीन प्रशिक्षण कार्यक्रमों से होती रहती है।

संसरति इति संसार । संसार परिवर्तनशील है। समाज परिवर्तनशील है। समाज अपनी आवश्यकताओं के अनुसार अपने नियमों, कानूनों, रीतिरिवाजों, आस्थाओं, रूढ़ियों, प्रथाओं, सोचने के तरीकों, व्यवहार के प्रतिमानों, रहनसहन के तौर तरीकों, भाषाओं, वस्त्रों तथा खानपीन में परिवर्तन करता रहता है। इसी क्रम में समाज में बालकों के बारे में अपने विचारों में भी परिवर्तन किये हैं। बच्चों को राष्ट्रीय तथा अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर कुछ अधिकारों से नवाजा गया है। अपने अधिकारों का उपयोग बच्चें स्वयं करने में तो असमर्थ रहते हैं, क्योंकि न तो उन्हें अधिकारों का ज्ञान होता है, न ही समझ होती है। उनकी

जानकारी का क्षेत्र भी सीमित ही रहता है। अध्यापक बच्चों के सबसे नजदीकी मित्र एवं संरक्षक होते हैं। अतः बच्चों के अधिकारों के सम्बंध में उन्हें जानकारी होनी ही चाहिये । ताकि वे बच्चों का हित सरंक्षण कर सकें।

संदर्भ ग्रंथ

Balakrishanan, R (1994): The Sociological Context of Girls' Schooling: Micro Perspectives from Delhi Slums in Social Action, 44 (July-September) 1994.

Balasbramarian, R. (Ed.) 1992 : Tolerance in Indian Culture New Delhi. Indian Philosophical Research.

Barua, B. (2003) : Jour. of All India Association for edu. Research Vol. 15, 3-4.

Basu , D.D. (2003) : Human Right in constitutional Law New Delhi Law Publishers, II Edition.

Bee, H. (1978) : The Developing Child, New York : Harper & Row Publishers.

Best, John W. (1986) : Research in Education, New Delhi Prentice Hall.

Beckett,Chris(2007): Child Protection-an Introduction. New Delhi SAGE Publications. www.sagepublication.com.

Bhagia, N.M. (1980) : Promoting Attitudes and Values through Environmental Studies. Naya Shikshak, Rajasthan Bikaner, 23 (2), 9-21.

Bhargava, R. (1998): Secularism and its cities, New Delhi, Oxford University, Press.

Bhaskara, R.D. (1997) : Scientific attitude, New Delhi, Discovery Publishing House.

Education, 25-26(4-1), 39-43.

Black, M (1994) : Children First: The Story of UNICEF, Past and Present, Oxford University Press.

Centre for Communication and Development (2007): DCWC Research Bulletin Oct.-DEC 2007

Committee for legal aid to poor (2006): DCWC Research Bulletin Apr-Ju.2007

CRY(2001):The Indian Child,2001.Child Relief and You,Mumbai,189/A Sane Guruji Marg Anand Estate.(www.cry.org.)

CRIN: Child Right Information Network c/o Save The Child.1 Sant John, Lane London ECIMAAR London.U.K. www.crin.org

Dhanda, V. & Nath, M. (1994) : Prachi Jour. of Psycho-Cultural Dimentions vol. 10C 1 , 1981

Diwan, Rasmi (1993): Sixth Survey of Edu. Research NCERT.

Dow, U (1998): Birth Registration: The First Right IN UNICEF Progress of Nation 1998. New York. UNICEF

Durkheim, E. (1953) : Moral Education, New York : Free Press of Glencoe.

Edword, Landon (1991) : Encyclopedia of Human Rights, London Francis Inc.

Ebrahim,G. J,(1985) :Social and Community Pediatrics in developing Countries Caring for the Rural and Urban Poor Macmillan.

Ehlers, H. (1977) : Crucial Issues in Education, New York : Holt, Rinehart and Winston.

Gangani Rajesh (2006): Status of Children in India .New Delhi Cyber Tech Publication.

Garret, E. Henry (2004) : Statistics in Psychology & Education. New Delhi, Paragon International Publishers, Dariyaganj.

Geetha,C.V& Bhaskar,G (1993) :Education for human rights and democracy. Simla,Indian Institute of Advance Studies, Workshop.

Giri,K (1995):Safe Motherhood Strategies in the Developing Countries in H M Wallace, Giri, K and Serrano, C V (eds) Health Care of Women and Children in Developing Countries, Oakland C A: Third Party Publishing Company .

Goldbrick, D.M. (1991) : Human Rights, its Role in development of International conversant on Civil & Political Rights. Oxford Uni.

Govt. of India :

: Report of committee on Emotional Integration, Ministry of education, 1962.

: Report of the committee for review of National policy of education 1986, 1990.

: Report of the committee on Religious and Moral. Instruction. Ministry of Education. 1959.